जन्मभूमि राजापुर लौटे। (ये स्मार्त वैष्णव थे। इनका विवाह दीनबन्धु पाठक की पुत्री रत्नावली से हुआ। ये अपनी ~~पत्नि~~ पत्नी के प्रति अत्यधिक आसक्त थे। एक बार अपनी ~~पत्नि~~ पत्नी के पीहर जाते ही पीछे-पीछे अपने ससुराल पहुँच गए। तब इनकी ~~पत्नि~~ पत्नी ने इन्हें फटकार लगाते हुए कहा कि- जितनी आसक्ति मेरे प्रति है, यदि उतनी ही आसक्ति तुम अपने आराध्य राम के प्रति रखते तो तुम्हारा जीवन धन्य हो जाता है। उस दिन से ये गृहस्थ जीवन जीते हुए बैरागी बन गए।)

(इनकी भक्ति दास्य भाव की थी। इनकी भक्ति-पद्धति की सबसे बड़ी विशेषता है - उसकी सर्वांगपूर्णता। इसमें जीवन के सभी पक्षों का सामंजस्य है। ये अपने समय के सर्वश्रेष्ठ समन्वयवादी कवि थे। इसीलिए इन्हें 'लोक नायक' कहा गया है। साथ ही ये अपने समय के सबसे बड़े महात्मा और भक्त थे। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल अपने इतिहास-ग्रंथ 'हिन्दी-साहित्य का इतिहास' में कहते हैं - "भारतीय जनता का प्रतिनिधि कवि यदि किसी को कह सकते हैं, तो इन्हीं महानुभाव को।")

इनके कुछ ग्रन्थों को लेकर जनश्रुतियाँ प्रचलित हैं।

रचनाएँ :- इनके प्रामाणिक ग्रन्थों की संख्या 12 है, जो निम्न-लिखित हैं :-

प्रबन्ध काव्य :- 1. रामचरितमानस (इसे लिखने में 2 वर्ष 7 माह लगे। इसमें राम की कथा है) 2. रामलला नहछू, 3. पार्वती मंगल, 4. जानकी म
गीति काव्य :- 1. विनयपत्रिका (इसमें इन्होंने अपने प्रार्थना पत्र को किसी माध्यम से राम के पास पहुँचाकर

ठेठ अवधी

उसे स्वीकृत करवाया), गीतावली, कृष्ण गीतावली।
मुक्तक काव्य :- 1. कवितावली, 2. वैराग्य संदीपनी, 3. बरवै रामायण, 4. रामाज्ञा प्रश्न, 5. दोहावली।

दोहावली, वैराग्य संदीपनी इन रचनाओं में विनय पत्रिका, कवितावली गीतावली और कृष्ण गीतावली ब्रज भाषा में और शेष रचनाएँ अवधी भाषा में है।)

most 2014

प्र.1 तुलसीदास की भक्ति - भावना का विश्लेषण कीजिए।
'भज' धातु में 'क्तिन्' प्रत्यय लगने से 'भक्ति' शब्द बना है। इसका अर्थ है - अपने आराध्य अथवा ईष्टदेव की सेवा करना। श्रद्धा के साथ ईश्वर को स्मरण करना ही भक्ति है। तुलसीदास राम के अनन्य भक्त थे। इन्होंने अपने ग्रन्थों - रामचरितमानस, कवितावली, गीतावली, बरवै रामायण और विशेषतः 'विनय पत्रिका' में राम के प्रति अनन्य भक्ति दिखाई है। इनकी भक्ति भावना 'दास्य भाव' की थी। इन्होंने अपने ईष्ट देव राम के समक्ष स्वयं को अत्यधिक छोटा बताया है :-

राम से बड़ो है कौन, मोसो कौन छोटो। (1)
राम से खरो है कौन, मोसो कौन खोटो॥

इनकी भक्ति - भावना की विशेषताएं :-

1. आस्था तथा विश्वास :- इन्होंने अपने ईष्ट राम के अलावा किसी भी अन्य ईश्वर के प्रति आस्था एवं विश्वास को प्रकट नहीं किया है। इनकी आस्था और विश्वास उस राम में है जिसने प्रहलाद तथा ध्रुव नामक भक्तों की रक्षा की, विभीषण और सुग्रीव नामक मित्रों को सर्वस्व दिया, ऋषि और मुनि जिन्हें कठोर तपस्या करके भी मुश्किल से प्राप्त करते हैं, जो दीनों के रक्षक एवं पालक हैं, तथा शरणागतों की रक्षा करने वाले हैं। वे कहते हैं-

एक ही भरोसो राम! रावरो कहावत हौं।

2. आत्मनिवेदन :- तुलसीदास ने राम के सम्मुख आत्मनिवेदन पूर्ण प्रयास के साथ किया है। उन्होंने स्थान-स्थान पर स्वयं के उद्धार और स्वयं को अपनाने के लिए इसका प्रयोग किया है। इसकी पुष्टि इनके सम्पूर्ण काव्य में दिखाई देती है। इन्होंने स्वयं को हीन, तुच्छ, तथा लघु बताया है। इन्होंने कहा कि मेरे जन्म के समय न तो मंगलकारी वाद्य बजे और न ही मेरा जन्म किसी सम्पन्न परिवार में हुआ है। साथ ही मूल नक्षत्र होने के कारण मैं अपने माता-पिता के लिए दुःख का कारण बना। वे मानते है कि राम दुःखों को दूर करने वाले हैं, इसीलिए उन्हें किसी बात की चिन्ता नहीं है। वे कहते हैं कि-

आरत-आरती भंजन राम, गरीबनेवाज न दूसरो ऐसो।

वे मानते हैं कि राम दयालु निधान है-

दोष-दुख-दारिद-दलैया दीनबंधु राम!
तुलसी न दूसरो दयानिधानु दुनी में॥

3. भावभूमियों का चित्रण :- इन्होंने अपने हृदय के भक्तिपूर्ण भावों को विविध प्रकार से प्रकट करके अपने हृदय का कलुषता का स्वच्छ कर लिया है। इन्होंने सात प्रकार के भावों को प्रकट करके अपनी काव्य की विलक्षणता को प्रकट किया है - 1. दीनता, 2. भय, 3. आश्वासन, 4. भर्त्सना, 5. अभिमान-मर्दन, 6. मन की उच्च अभिलाषाएं और 7. दार्शनिक विचार।

इन्होंने मनुष्य को भय दिखाकर संतों की सभा में बैठने के लिए कहा है। इनके हृदय में राम की कृपा का आश्वासन व्याप्त है। इनका मानना था कि मनुष्य को अपने हृदय में विद्यमान अभिमान को नष्ट करना चाहिए। मन में विद्यमान उच्च अभिलाषाओं को पूर्ण करने के लिए इन्होंने विभिन्न स्थानों पर राम से प्रार्थना की है। इनका मानना था कि मनुष्य को लोभी न बनकर

सब उदार सब पर उपकारी।
विष ... सेवक नर-नारी।। (3)

स्वयं को राम की भक्ति के लिए तैयार रखना चाहिए।

4. शरणागतों का चित्रण: इन्होंने अपने शत्रु रावण के भाई विभीषण को सोने की लंका प्रदान की। सुग्रीव को किष्किंधा नगरी का शासन सौंपा। शबरी के झूठे बेरों को खाकर उसे मुक्ति प्रदान की। जटायु को मोक्ष प्रदान किया। अहिल्या तथा अजामिल का उद्धार किया। गज की रक्षा की। इस कारण वे शरणागत राम के गुणों को हमेशा गाते रहते थे। वे कहते हैं- साँकरे के सेइबे, सराइबे सुमिरिबे को,
राम-सो न साहेबु, न कुमति-कटाइबे को।

5. दार्शनिक भावों का चित्रण:- इनके काव्य में दर्शन की सात विशेषताएँ प्राप्त होती हैं- गहरी अध्यात्म भावना, मोक्ष के लिए परम पुरुषार्थ, चैतन्य भाव, सत्यनिष्ठा, धर्म के साथ घनिष्ठ संबंध, परम्परा के प्रति आस्था और समन्वय की दृष्टि। इनके काव्य में दार्शनिक भावना की धारा लगातार बहती रही है। यह संसार को नश्वर मानते-मानते दार्शनिक बन गए है। इसके अलावा ये मानते है कि कलियुग ने कोहराम मचाकर सभी धर्मों को अपने प्रभाव से युक्त कर लिया है। लोग इसके भय से ग्रस्त हैं और वे इससे दूर रहना चाहते हैं-
धर्म सबै कलिकाल ग्रसे, जप,जाप, विराग लै जीव पराने।
इस कलियुग पर एक राजा परीक्षित ने अत्यधिक उपकार किया, परन्तु इसने उस उपकार को भुलाकर कृतघ्नता का परिचय दिया।
छाड़े छितिपाल जो परीछित भये कृपाल,
भलो किये खल को, निकाई सो नसाई है।
इनका मानना है कि कलियुग के प्रभाव के कारण लोग बेरोजगार होकर भटक रहे है। किसानों की खेती प्रभावहीन हो गई है। भिक्षुकों को भिक्षा नहीं मिल रही है। लोगों का व्यापार मंदा पड़ गया है। लोग इससे बचने में असफल हो रहे हैं। तुलसीदास का मानना है कि गंगा में स्नान करने वाला व्यक्ति

Scanned with CamScanner

स्वयं का उद्धार कर लेता है।

6. विनय भावना :- इनकी दास्य भाव की भक्ति में दीनता और विरह की प्रधानता है। इन्होंने विनय की भूमिकाओं- दैन्य, अहंकार का त्याग, भय के दर्शन, स्वयं की निन्दा, आश्वासन, मनोराज्य, विचारणा और आसक्त्यों का चित्रण किया है। वनवासियों की दीनता की भावना तथा राम के प्रति इनकी स्नेह की भावना अयोध्याकाण्ड में प्रकट हुई है।

7. सत्संगति पर बल :- इन्होंने भक्ति की सफलता का आधार सत्संगति को माना है, क्योंकि संत हमेशा भगवान पर आश्रित रहते हैं। संतों के सम्पर्क में आकर मनुष्य ईश्वर की भक्ति की ओर बढ़ता है। इन्होंने सत्संगति के साथ-साथ ज्ञान और वैराग्य को भी भक्ति में स्थान दिया है।

8. सात्विक भावों की प्रधानता :- इन्होंने अपनी भक्ति में सात्विक भावों को स्थान दिया है। इन्होंने सेव्य-सेवक भाव से ईश्वर की पूजा करना अपना कर्तव्य माना है। भरत राम के अनन्य भक्त थे। ननिहाल से लौटते हुए जब उन्हें अपनी माता के वरदान से राम के वनवास-गमन का पता चलता है, तो वे अपनी माता की भर्त्सना करते है। आत्मग्लानि में डूबकर वे स्वयं को धिक्कारते हैं। वे मानते हैं कि संसार में उनके समान कोई दूसरा पापी नहीं है। इस प्रकार तुलसीदास ने भरत के हृदय की सात्विकता को प्रकट किया है। इसीलिए इनकी भक्ति भावना श्रद्धा और विश्वास से युक्त दिखाई देती है।

9. अहंकार का त्याग और दीनता का भाव :- तुलसीदास मानते है कि भक्त को अपने हृदय में विद्यमान अहंकार का त्याग करके दीनता

का भाव रखते हुए अपने ईष्टदेव के सामने श्रद्धा व विश्वास के साथ एकनिष्ठ होकर भक्ति करनी चाहिए। तभी ईश्वर का सामिप्य संभव है। अहंकारी व्यक्ति ईश्वर की भक्ति नहीं कर सकता।

10. वैराग्य की भावना :- तुलसीदास मानते हैं कि काम, क्रोध, मद और लोभ इत्यादि बूरे भावों का त्याग करना ही वैराग्य है। ये मानते हैं कि वैराग्य प्राप्त करने की प्रथम अवस्था तो केवल राम की कथा का गुणगान करना चाहिए। मनसा - वाचा - कर्मणा से परोपकार में लगे हुए रहना चाहिए।

11. अनन्य भाव :- ये मानते थे कि अपने आराध्य के चरणों में स्वार्थ को त्यागकर पूर्णरूपसे स्वयं को समर्पित करने पर भक्त भक्ति को प्राप्त कर सकता है। ये मानते थे कि जैसे चातक, चकोर, मछली स्वाती नक्षत्र में बादल, चन्द्रमा तथा जल के साथ अनन्य प्रेम रखते हैं, वैसे ही मैं भी अपने आराध्य राम के प्रति अनन्य प्रेम रखता हूँ -

एक भरोसो, एक बल, एक आस विश्वास।
एकराम घनश्याम हित, चातक तुलसीदास॥

12. नवधा भक्ति :- इनकी भक्ति में श्रवण, कीर्तन, वन्दन, दासता, स्मरण, आत्म - निवेदन, अर्चना, पद - वन्दना और सखाभाव आते हैं। अतः वैसे तो इनमें नौ (9) प्रकार की भक्ति पाई जाती है, परन्तु मूलतः इनकी भक्ति दास्य भाव की है। ये राम को स्वामी तथा स्वयं को उनका सेवक मानते हैं। ये भक्तिकाल के सगुण भक्ति धारा के समर्थक हैं। इनके साहित्य में राम के प्रति अत्यधिक भक्ति भावना प्रकट हुई है। ये मानते हैं कि राम पतितों का उद्धार करने वाले हैं और लोक कल्याणकारी दान देने में

शिरोमणि हैं। ये भक्तों के वत्सल हैं। तुलसी की भक्ति राम को सर्वस्व मानकर प्रकट हुई है। इन्होंने अपने राम के प्रति अनन्यता को सर्वत्र प्रकट किया है। इनकी भक्ति में मुख्यतः चार विशेषताएँ दिखाई देती हैं-

1. सगुणोपासना, 2. राम के शील तथा सौंदर्य का चित्रण, 3. अनन्य भाव, 4. नाम-स्मरण।

इन्होंने सगुण राम को अपनाकर उन्हें मर्यादा पुरुषोत्तम माना है। सगुण राम को मानने पर भी इन्होंने अपने काव्य में कहीं पर भी निर्गुण ईश्वर का खण्डन नहीं किया है। इन्होंने ईश्वर के विराट रूप की विवेचना की है। इनके अनुसार शबरी, केवट, जटायु, प्रहलाद तथा अजामिल को मुक्ति देने वाले सगुण राम हैं। इनके हृदय में राम के प्रति गर्व का भाव है-

जानत जहान, मन मेरे हूँ गुमान बड़ो,
मान्यो मैं न दूसरो, न मानत, न मानिहौं।

तुलसी मर्यादा पुरुषोत्तम राम के गुलाम हैं-

तुलसी सरनाम गुलाम है राम को,
जाको रुचै सो कहै कछु ओऊ।

इनका मानना है कि वे राम के भरोसे ही सुख की निद्रा को ग्रहण कर रहे हैं। ये मानते हैं कि राम का शील अत्यधिक उच्च है। इन्होंने अपने शील की रक्षा के लिए अयोध्या लौटने पर अपनी पत्नी सीता तक का त्याग कर दिया। इनका अवतार दुष्टों के विनाश तथा साधुओं की रक्षा के लिए हुआ है। इनकी उदारता एवं करुणा व्यापक है। तुलसी मानते हैं कि 'राम' के नाम में सर्वस्व है। साथ ही इनका मानना है कि ज्ञान और भक्ति में कोई भेद नहीं है और ये दोनों ही संसार के कष्टों को दूर करने वाले हैं। इन्होंने कहा है - 'ज्ञानहिं भगतिहि नाहिं कछु भेदा।

उभय हरहि भव संभव खेदा।'

इन्होंने निष्कर्षतः ज्ञान और भक्ति का शुद्ध चित्रण 'रामचरित मानस' में किया है। ये मानते हैं कि ईश्वर को भक्ति मार्ग और ज्ञानमार्ग दोनों से प्राप्त किया जा सकता है, परन्तु भक्ति मार्ग अपनी सरलता और सुगमता के कारण अत्यधिक लोकप्रिय है। अतः इन्होंने इसी भक्ति मार्ग का प्रतिपादन अपनी भक्ति-पद्धति में किया है। इस भक्ति में एक ओर शास्त्रोचित विधियों का पूर्ण समावेश है तो दूसरी ओर यह अपनी सरलता के कारण जनसाधारण में भी लोकप्रिय हुई है।

प्रश्न:2 तुलसीदास की समन्वय भावना का विश्लेषण कीजिए। अथवा तुलसीदास का लोकनायक के रूप में विश्लेषण कीजिए।

उ:- ये अपने समय के सर्वश्रेष्ठ समन्वयवादी कवि थे इसीलिए इन्हें 'लोकनायक' कहा गया है। इनका प्रादुर्भाव मुगलों के समय में हुआ। उस समय धर्म, समाज, राजनीति और संस्कृति आदि सभी क्षेत्रों में असमानता और वैमनस्य फैला हुआ था। इससे पूर्व सन्त कवियों ने सम्पूर्ण भारत में भावात्मक एकता स्थापित करने का प्रयास किया किन्तु तुलसी ने इस असमानता को दूर करने के लिए समन्वय का अनूठा प्रयास किया।

समन्वय का अभिप्राय है - विरोध दूर करके और पारस्परिक भेदभाव को समाप्त करके समरसता उत्पन्न करना। इन्होंने समाज, धर्म, भक्ति और आचार-व्यवहार के क्षेत्र में भी समन्वय का विशेष प्रयास किया। इस क्षेत्र में भी असमानताओं को दूर करके काव्य के अन्य विविध क्षेत्रों में भी समन्वय का विशेष प्रयास किया। इस क्षेत्र में इनके योगदान की प्रशंसा करते हुए आचार्य

Scanned with CamScanner

हजारी प्रसाद द्विवेदी कहते हैं
"लोकनायक वही हो सकता है, जो समन्वय कर सके।
तुलसी का सम्पूर्ण काव्य समन्वय की विराट चेष्टा है।"

तुलसी का विविध क्षेत्रों में समन्वय :-

(1) नर और नारायण का समन्वय :- तुलसी ने राम को दशरथ के पुत्र के रूप में स्वीकार करते हुए परमात्मा के रूप में स्वीकार किया है। ये मानते हैं कि धर्म की स्थापना करने के लिए और असुरों के विनाश के लिए भगवान विष्णु राम के रूप में प्रकट हुए हैं -

भए प्रकट कृपाला दीनदयाला कौसल्या हितकारी।

इनका मानना है कि राम भले ही 'नरलीला' कर रहे हो किन्तु अन्ततः वे अखण्ड, अनन्त, अरूप और अचल ईश्वर हैं। ये सज्जनों दुख दूर करने वाले हैं और ये मन, वाणी और बुद्धि से अ   हैं।

(2) सांस्कृतिक समन्वय :- इन्होंने इस क्षेत्र में (1) प्रवृत्ति एवं निवृत्ति, (2) भौत एवं मंगल, (3) लोक एवं वेद में समन्वय किया है।

(i) इनका मानना था कि पूर्णतः घर की साधना करना हानिप्रद है और पूर्णतः वन की साधना करना पलायन है। दोनों में तालमेल बैठाकर कर्म करते हुए जीवन में इच्छित सुख, समृद्धि और शांति को प्राप्त किया जा सकता है -

घर राखे घर जात है, पर छोड़े घर जाये।
तुलसी घर वन बीच ही रहो प्रेमपुर छाय॥"

(ii) भौत का अर्थ - व्यक्तिगत कल्याण और मंगल का अर्थ - सामाजिक कल्याण है। दोनों में से किसी एक आधार पर

वास्तविक आनन्द की प्राप्ति नहीं हो सकती है। इसीलिए दोनों में समन्वय का होना अत्यधिक आवश्यक है।

(iii) लोक एवं वेद में समन्वय से तात्पर्य सभ्यता और संस्कृति के समन्वय से है। लोक वर्तमान और वेद अतीत के बोधक है। दोनों को एक-दूसरे की अपेक्षा है। तुलसी ने अपने साहित्य में इन दोनों को जुड़वा शब्द के रूप में प्रयुक्त किया है।

3) धार्मिक समन्वय :- धर्म के दो पक्ष होते है - विश्वास और आचरण। कहीं पहला पक्ष प्रधान होता है तो कहीं दूसरा पक्ष। इन्होंने इस क्षेत्र में -

(i) धार्मिक आस्थिकता के केंद्र बिंदु
(ii) धार्मिक उपास्य देवों
(iii) धार्मिक आस्था के मूल स्त्रोतों
(iv) धार्मिक साधना के विविध मार्गों में समन्वय किया।

i) भारत में धार्मिक आस्था के दो केंद्र बिन्दु थे - निर्गुण ब्रह्म, सगुण ब्रह्म। इनके राम साकार और निराकार दोनों ही थे। साधु सन्तों के कष्टों का निवारण करने के लिए और धर्म की स्थापना करने के लिए जहाँ एक ओर सगुण रूप धारण करते है तो दूसरी ओर वे अनन्त, अव्यक्त, अविकारी, अचल और अनिकेत है। जैसे:- जल, बर्फ और ओले बाहर से अलग दिखकर भी मूलतः एक ही तत्व जल के विविध रूप है। ठीक उसी प्रकार ईश्वर कभी निर्गुण तो कभी सगुण रूप में दिखाई देता है। इन्होंने कुछ स्थानों पर ब्रह्म की सगुण रूप में स्थापना की है तो दूसरी तरफ इन्होंने उसे निर्गुण रूप में सर्वव्यापक सिद्ध किया है -

सगुन अगुनहि नहि कछु भेदा, गावत मुनि पुरान बुध बेदा।

Scanned with CamScanner

इन्होंने सहिष्णु और संतुलित अवधारणा के अंतर्गत सभी मतों और संप्रदायों को एक दूसरे के पास लाने का मार्ग प्रशस्त किया। इन्होंने रामावत और पुष्टि मार्ग में समन्वय स्थापित किया। शैव, शाक्त और वैष्णव मतों में चल रहे संघर्ष को समाप्त करने का प्रयास किया। तुलसी ने राम के मुख से यह कहलाया - शिव द्रोही मम दास कहावा, सो नर मोहि सपनेहु नहिं भावा। इन्होंने राम को शिव का अनन्य भक्त सिद्ध करने का एक विलक्षण कार्य किया। ये राम और शिव में भेद न मानते हुए कहते है -

हरिहर पद रति मति न कुतरकी।

(iii) इन्होंने धार्मिक आस्था के मूल स्त्रोतों - निगम और आगम में समन्वय स्थापित करने का प्रयास किया।

(iv) इन्होंने धार्मिक साधना के तीनों मार्गों - ज्ञान, कर्म और उपासना में समन्वय स्थापित किया। इन्होंने उसी भक्ति को श्रेय और प्रेय से युक्त माना जिसमें ज्ञान और कर्म दोनों का प्रभाव आकर मिलता हो।

4. आध्यात्मिक समन्वय :- इन्होंने इस क्षेत्र में - 1. विभिन्न आध्यात्मिक एवं दार्शनिक चिन्तन धाराओं 2. मनुष्य की केंद्रीय स्थिति और जीवन की सार्थकता में समन्वय किया।

1. इनके समय में विभिन्न वादों में आपसी संघर्ष चल रहे थे। सभी एक दूसरे का खण्डन और विरोध कर रहे थे। तुलसी ने कहा कि इस संसार में कुछ लोग संसार को मिथ्या कहते हैं, तो कुछ लोग ब्रह्मा को सत्य कहते है। कुछ लोग दोनों को प्रबल मानते हैं। तुलसी मानते हैं कि हमें तीनों ही मत-मतान्तरों को छोड़कर स्वयं की पहचान करनी चाहिए।

2. तुलसी ने मनुष्य की केंद्रीय स्थली क और जीवन की सार्थकता से संबंधित एक सुंदर व संतुलित दृष्टिकोण प्रस्तुत करते हुए इनमें समन्वय स्थापित किया।

5. राजनीतिक समन्वय: - तुलसी का प्रादुर्भाव मुगलों के समय हुआ। उस समय राजा अपने कर्तव्य पर पालन नहीं कर रहे थे और प्रजा अनेक कष्ट भोग रही थी। तब इन्होंने 'राम-राज्य' की कल्पना की। इसके अन्तर्गत एक आदर्श शासन व्यवस्था को प्रस्तुत किया। इन्होंने इस क्षेत्र में -
1. राजा संबंधी धारणा, 2. राजा और प्रजा संबंधी कर्तव्य - में समन्वय स्थापित किया।

1. तुलसी ने राजा को प्रजा का सच्चा प्रतिनिधि माना। इन्होंने राजा की सर्वोपरि सत्ता को स्वीकार करते हुए उसकी निरंकुशता को अस्वीकार किया। इन्होंने उसके पद को प्रजा की सेवा का साधन माना। इन्होंने राजा को 'सूर्य' की उपमा प्रदान की।
"बरसत हरषत लोग सब, करषत लखै न कोइ।
तुलसी प्रजा सुभाग ते, भूप भानु सो होइ।"
जब राजा अपने हितों को साधने लगता है तो पतन की तरफ बढ़ने लगता है।

2. प्रजा को भी अपने अधिकारों का समुचित उपयोग करते हुए अपने कर्तव्यों का उचित पालन करना चाहिए ताकि राजा को उसके साथ कठोरता का व्यवहार न करना पड़े। इसीलिए तुलसी ने "रामचरितमानस" महाकाव्य में 'राम-राज्य' की कल्पना की।

6. ज्ञान और भक्ति का समन्वय:- इनके समय एक ओर तो ज्ञानमार्गी भक्ति प्रबल थी, तो दूसरी तरफ प्रेममार्गी भक्ति। एक तरफ कृष्णभक्त थे, तो दूसरी तरफ रामभक्त। इन्होंने ज्ञान श्रेष्ठ बताया, परन्तु उसे अगम और तलवार की धार के समान कठिन भी बताया -
ग्यान पंथ कृपाण है धारा।
इन्होंने भक्ति को सम्पूर्ण सुखों की खान सरल, सहज और सुगम

बताया तो ज्ञान को घृत। तुलसी ने अपनी भक्ति के लिए ज्ञान और वैराग्य को आवश्यक बताया। ये सगुणमार्गी थे फिर भी इन्होंने ज्ञानमार्गियों का समर्थन किया। ये जीवन का मूल उद्देश्य मुक्ति को मानते है। इन्होंने "रामचरितमानस" महाकाव्य के 'उतरकाण्ड' में ज्ञान को 'दीपक' तथा भक्ति को 'मणि' माना है। इन्होंने ज्ञान और भक्ति में समन्वय करते हुए कहा है -

ज्ञानहि भगतिहि नहिं कछु भेदा,
उभय हरहि भव संभव खेदा।

7\. दार्शनिक समन्वय :- इनके समय अनेक दार्शनिक विचारों का प्रभाव था। इनके समय में अद्वैतवाद, द्वैतवाद, द्वैताद्वैतवाद, विशुद्धाद्वैतवाद तथा विशिष्टाद्वैतवाद में आपसी संघर्ष चल रहे थे सभी एक-दूसरे का खण्डन और विरोध कर रहे थे। इन्होंने सभी मतों को नजदीक से देखा। साथ ही कहा कि संसार मिथ्या है, परन्तु माया के प्रभाव से यह सत्य प्रतीत होता है। इसीलिए निष्कर्षतः इन्होंने सभी मत-मतान्तरों को अप्रधान बताते हुए अद्वैतवाद और विशिष्टाद्वैतवाद में समन्वय स्थापित करते हुए विशिष्टाद्वैतवाद की स्थापना की। ये इसी वाद के अनुयायी थे। ये जीव को ईश्वर का अंश मानकर उसे ईश्वर के समान चेतन, पवित्र और अविनाशी मानते हैं -

ईस्वर अंस जीव अविनासी। चेतन, अमल, सहज सुखरासी॥

इन्होंने संसार को शून्य में निर्मित चित्र मानकर भी 'विशिष्टाद्वैतवाद' विचारधारा का समर्थन किया।

8\. सामाजिक समन्वय :- इन्होंने इस क्षेत्र में - 1. व्यक्ति की ईच्छा व सामाजिक दायित्व, 2. पारिवारिक संबंधों, 3. वर्गगत कर्तव्य भावना, 4. नारी विषयक मान्यताओं - में समन्वय किया।

Scanned with CamScanner

1. इनका मानना था कि व्यक्ति की इच्छा और समाज के दायित्व एक-दूसरे के पूरक है। राम, भरत, लक्ष्मण, सीता और कौशल्या के चरित्र इसके प्रमाण है। निर्वासन के बाद जब भरत पर विशेष संकट आया तो कौशल्या राम से अधिक भरत के लिए चिंतित रही। इन्होंने वशिष्ट की निषादराज और राम की केवट, शबरी, वानर, भालू और रीच में भेंट कराकर सामाजिक भेदभाव को मिटाने का प्रयास किये।

2. इन्होंने पिता-पुत्र, भाई-भाई, सास-बहु और स्वामी-सेवक में सुन्दर समन्वय कि स्थापित किया। राम के रूप में इन्होंने एक आदर्श पुत्र, आदर्श भाई, आदर्श पति और आदर्श मित्र का स्वरूप प्रस्तुत किया। भरत, भ्रातृत्व की भावना के आदर्श है और लक्ष्मण अग्रज के प्रति सेवा की भावना के। हनुमान सेवक धर्म के आदर्श है, विभीषण सच्चे भक्त के आदर्श है और सुग्रीव मैत्री धर्म के आदर्श है। चित्रकूट सभा में यह निर्णय किया गया कि अयोध्या के राजा तो राम ही होंगे किन्तु वनवास की अवधि में भरत राजा के प्रतिनिधि बनकर अयोध्या की देखभाल करेंगे। पिता के वचन का पालन करते हुए चौदह वर्षों तक वनवास में रहकर राम ने आदर्श पुत्र होने का जो उदाहरण प्रस्तुत किया वैसा विश्व में अन्यत्र कहीं दिखाई नही देता है।

3,4 ये वर्ण-व्यवस्था की वकालत करते थे और नारी को बराबरी के दर्जे से वंचित रखने की बात कहते थे। इन्होंने अपने समय में देखा कि कवि नारी को घृणा की दृष्टि से देख रहे हैं तो इन्होंने वर्ण-व्यवस्था और नारी-विषयक व्यवस्था - दोनों में समन्वय कराने का प्रयास किया।

9. साहित्यिक समन्वय —

1) इन्होंने ब्रज एवं साहित्यिक अवधी (पश्चिमी) - दोनों भाषाओं

को अपनाया। इन्होंने बारह (12) प्रामाणिक रचनाएँ लिखी, जिनमें से चार रचनाएँ :- विनयपत्रिका, गीतावली, कृष्ण गीतावली और कवितावली। तो ब्रज भाषा में और अन्य आठ (8) रचनाएं - रामचरितमानस, पार्वती मंगल, जानकी मंगल, वैराग्य संदीपनी, बरवै रामायण, रामाज्ञाप्रश्न, रामललानहछू, दोहावली अवधी भाषा में लिखी।

2. इन्होंने वीरगाथाकाल की छप्पय-पद्धति, सूरदास और विद्यापति की गीत- पद्धति, भाटों की कवित्त - पद्धति, दोहा - चौपाई - पद्धति और सूक्ति - पद्धति को अपनाया। इस समय शिक्षित जनता में जितने प्रकार की काव्य पद्धतियों का प्रचलन था, इन्होंने उन सबको सफलता के साथ अपनाया।

3 इन्होंने अपने समय में प्रचलित सभी काव्य - शैलियों का प्रयोग किया। इन्होंने अपनी रचनाओं में इन सभी शैलियों को अपनाया।

4. इन्होंने भाषा और संस्कृत में समन्वय स्थापित किया। 'रामचरितमानस' और 'विनयपत्रिका' की स्तुतियों में संस्कृत का प्रयोग करके भाषा और संस्कृत में समन्वय स्थापित किया।

इन्होंने मंगल काव्य लिखे और विभिन्न रागों में भी काव्य लिखे। इन्होंने श्रव्य और दृश्य, भाव और भाषा, भक्ति और कविता और छन्द एवं अलंकार इत्यादि में कलात्मक सामंजस्य स्थापित किया।

निष्कर्षतः तुलसी अपने समय के महान समन्वयवादी थे। इन्होंने जीवन और संसार के प्रत्येक क्षेत्र में समन्वय स्थापित करते हुए सब लोगों को साथ लेकर चलने का प्रशंसनीय कार्य किया। इन्होंने साहित्य के क्षेत्र में पूर्व की परम्पराओं - खण्डन, मण्डन और अस्वीकृति को नकारकर समन्वयवादी दृष्टि का परिचय देकर समाज में सौहार्द और समता के वातावरण को स्थापित किया। यह सच्चे अर्थों में महान समाजसुधारक, समन्वयकर्ता और लोकनायक थे।

Scanned with CamScanner

तुलसीदास के काव्य का कला पक्ष :

1. भाषा: इन्होंने लोगों के हृदय में भक्ति का भाव उत्पन्न करने के लिए लोक भाषा अवधी की प्रधानता के साथ ब्रज भाषा का प्रयोग किया। भाषा सौष्ठव की दृष्टि से इनके ग्रन्थ - 'रामचरितमानस' और 'विनयपत्रिका' सर्वोत्कृष्ट ग्रन्थ माने जाते है। इनके काव्य में संस्कृत के शब्दों के अलावा अरबी, फारसी और उर्दू के शब्दों का प्रयोग किया गया है। इनकी भाषा भाव-प्रेक्षण में समर्थ है। यह प्रसंगानुकूल तथा पात्रानुकूल भी है। यह शुद्ध, व्याकरण सम्मत और समास बहुल भी है। इन्होंने शब्दार्थों के संतुलन पर विशेष बल दिया है।

2 छंद-योजना :- इन्होंने 'रामचरितमानस' महाकाव्य में दोहा, सोरठा, चौपाई, हरिगीतिका, इन्द्रवज्रा, मालिनी और वसन्ततिलका इत्यादि छन्दों का सफल प्रयोग किया है। इनके छन्द भावों के अनुरूप और प्रसंगों के अनुकूल है। इनमें संगीत और लय के साथ प्रभाव उत्पन्न करने की क्षमता भी है।

3 अलंकार योजना इन्होंने अलंकारों का प्रयोग भावोत्कर्ष के लिए किया है। इनके काव्य में अनुप्रास, यमक, रूपक, उपमा, उत्प्रेक्षा, श्लेष और भ्रान्तिमान इत्यादि अलंकारों का प्रयोग हुआ है। इनके प्रिय अलंकार रूपक और उपमा है। अनुप्रास अलंकार का एक उदाहरण प्रस्तुत है -

मरकत मृदुल कलेवर श्यामा।
अंग-अंग प्रति छवि बहुकामा॥
नव राजीव अरूण मृदु चरणा।
पदज रुचिर नख ससी दुती हरना।

Scanned with CamScanner

सांग रूपकों की योजना में तुलसी बेजोड़ माने जाते हैं। इस दृष्टि से 'रामचरितमानस' महाकाव्य एक बेजोड़ ग्रन्थ है। इसका एक उदाहरण प्रस्तुत है -

सुमति भूमि थल हृदय अगाधू। वेद पुरान उदधि घन साधू ॥
बरसहि राम सुजस बर बारी। मधुर मनोहर मंगलकारी ॥

रस-योजना :- तुलसीदास ने "रामचरितमानस" महाकाव्य में उत्तरकाण्ड में शांत रस का प्रयोग किया है। कुछ स्थानों का करुण और श्रृंगार रसों के दर्शन होते है। इसके अलावा इनके सम्पूर्ण काव्य में वत्सल, हास्य, रौद्र और भयानक इत्यादि रसों का प्रयोग मिलता है। श्रृंगार रस का एक उदाहरण प्रस्तुत है-

राम को रूपु निहारति जानकी कंकन के नग की परछांही।
याते सबै सुधि भूलि गई कर टेकि रही पल हारति नाहीं ॥

गुण-योजना :- भाषा को रस के अनुकूल बनाने के लिए तुलसी ने अपने काव्य में प्रसाद गुण और माधुर्य गुण का विशेषतः प्रयोग किया है। कुछ स्थानों क पर ओज गुण के भी दर्शन होते हैं। माधुर्य गुण का एक उदाहरण प्रस्तुत है -

पीपर-पात सरिस मन डोला।

वृत्ति-योजना (रीति-योजना) :- इन्होंने अपने काव्य में पांचाली, वैदर्भी, गौड़ी, ~~कोमला~~ कोमला, उपनागरिका और परुषा वृत्तियों का प्रयोग किया है।

शब्द-शक्ति योजना :- अधिकांशतः इनके काव्य में लक्षणा शब्द-शक्ति के दर्शन होते हैं, तो कुछ स्थानों पर अभिधा शब्द-शक्ति के दर्शन होते हैं।

कुछ स्थानों पर इन्होंने लोकोक्तियों और मुहावरों का

Scanned with CamScanner

भी प्रयोग किया है। बिम्ब-योजना के द्वारा अपने काव्य को चित्रात्मक और लोकग्राही बनाने का सफल प्रयास किया है। इनका सम्पूर्ण काव्य गेयता के गुण से सम्पन्न है।

रामचरितमानस - व्याख्या

नाथ न मोहि . . . . सुगंध बसाई॥

प्रसंग:- उपर्युक्त पद्यांश भक्तिकाल की सगुण भक्तिधारा की राममार्गी शाखा के प्रवर्तक गोस्वामी तुलसीदास द्वारा रचित महाकाव्य "रामचरितमानस" के काण्ड 'उतरकाण्ड' से लिया गया है। इस काण्ड में मुख्यतया भक्ति-भावना का विश्लेषण किया गया है। इसमें विभिन्न वार्तालापों द्वारा संतों और असंतों के लक्षणों और भक्ति का गुणगान किया गया है। तुलसी मानते हैं कि व्यक्ति सांसारिक बन्धनों से मुक्त होकर एवं एकनिष्ठ होकर सच्चे हृदय से ईश्वर को प्राप्त करने का प्रयास करे तो उसे सफलता मिलने की संभावना है। उपर्युक्त पद्यांश में भरत भगवान राम से संतों के लक्षण बताने के बारे में कह रहे हैं -

व्याख्या:- भरत भगवान श्री राम से कह रहे हैं कि हे स्वामी! मुझे स्वप्न में भी कोई दुःख, संदेह और मोह नहीं है। हे दया और आनन्द की राशि! यह सब केवल आपकी दया का ही प्रभाव है। हे दया के भण्डार! मैं आपसे एक धृष्टता कर रहा हूँ। इसका कारण यह है कि मैं आपका दास हूँ और आप अपने दासों को सुख देने वाले हैं। हे रघुनाथ! मैं आपसे अच्छे पुरुषों के महत्त्व के बारे में पूछना चाहता हूँ क्योंकि इनके बारे में वेदों और पुराणों में भी बहुत कुछ कहा गया है। भरत कहते हैं कि आपने भी अपने मुख से उन अच्छे पुरुषों की प्रशंसा की है और आपको उनसे अत्यधिक

वे अनुशासित हैं, पिता को आया जानकर उनसे मिलने यों ही नहीं दौड़ पड़ते। विश्वामित्र के साथ ही उनके समीप जाते हैं। उनके मन में कृतज्ञता, स्नेह, वात्सल्य, उदारता आदि गुण कूट-कूट कर भरे हैं। लंका से लौटने पर बिभीषण, सुग्रीव आदि द्वारा युद्ध में की गई सहायता का पूरा उल्लेख करते है। पिता के वचन की रक्षा के लिए सहर्ष वनवास स्वीकार करना, भरत के अनुरोध पर राज्य का लोभ न करना, ऋषियों पर निशाचरों के अत्याचार सुनकर 'निशिचर हीन करौं मही भिजउठाइ प्रन कीन्ह' से आर्तत्राण की भावना, शरणागत वत्सलता, नीतिज्ञता आदि गुणों का परिचय उनके चरित से मिलता है। बाद में अकेले ही चौदह हजार राक्षसों का वध और लंका में राक्षसों के विरुद्ध दिखाये गये शौर्य से उनके असाधारण शौर्य का परिचय मिलता है। यह तो राम के महामानवत्व का पक्ष है। पीड़ित व्यक्ति किसी शूर, निर्भीक और आर्तत्राणव्रती से ही अपनी रक्षा की आशा कर सकता है। इसलिए राम की ओर दुखी और संत्रस्त समाज की रक्षा की आशा से देखना कोई अनुचित नहीं।

आधिदैविक रूप—किन्तु ऐतिहासिक व्यक्ति पश्चाद्वर्ती समाज की रक्षा के लिए कैसे आगे आ सकता है। पुनः एक विदेशी और विधर्मी सत्ता से रक्षा का प्रश्न है, व्यक्ति से नहीं। जो समस्या दण्डक वन के ऋषियों की थी, वही तुलसी के समसामयिक समाज की थी —

जब जब होइ धरम कै हानी। बाढ़हिं अधम असुर अभिमानी॥

रावण का शासन प्रतीक रूप में ही देखें तो यवन शासन का ही वर्णन किया गया प्रतीत होता है, जिससे रक्षा के लिए प्रणतपाल भगवंता को स्मरण करने की आवश्यकता पड़ी। मानस के राम का जब तक यह पक्ष सामने न रखा जाय, तब तक उनका व्यक्तित्व पूर्ण रूप से चित्रित नहीं होता।

राम परात्पर ब्रह्म हैं। वे निर्गुण होने पर भी भक्तों की रक्षा और धर्म की स्थापना के लिए सगुण भी हो जाते हैं। दोनों में वास्तविक अन्तर नहीं होता। जैसे पानी, बर्फ और ओले एक पानी के ही भिन्न-भिन्न रूप हैं।

जो गुन रहित सगुन सोइ कैसे। जलु हिम उपल विलग नहि जैसे॥

ये वेदप्रसिद्ध पुरुष हैं, प्रकाशक, सर्वत्रव्यापक होने पर भी विभिन्न रूपों में प्रकट, सबके प्रभु रघुकुल भूषण हैं।

उनके रोम-रोम में कोटि-कोटि ब्रह्माण्ड रमे हैं। अपनी माया से सारे विश्व का निर्माण करते हैं। उनके स्वरूप का यथार्थ ज्ञान कठिन है। और उनको जान लेने के बाद ही सब कुछ जाना हुआ ज्ञात होता है।

तस्मिन् ज्ञाते हि सर्वज्ञातं भवति।

वे ही सबकी अन्तरात्मा में स्थित होकर सब को प्रवृत करते है —

विषय करन सुर जीव समेता। सकल एकते एक समेता॥
सबकर परम प्रकाशक जोई। राम अनादि अवधपति सोई॥

वे ही वे अन्तरात्मा हैं जिनके सम्बन्ध में कहा है— योह्यन्तः सन्नन्तर्यमयति। तथा

तमेव भान्तमनुभान्ति सर्वे, तस्य भाषा सर्वमिदं विभाति।

वे सूत्रधार हैं और सारी आत्माएँ दासयोषित्— कठपुतलियां हैं जिन्हें वे मनइच्छा से नचाते हैं।

जिस प्रकार सूर्य की किरणों से बालू में लहराता पानी दिखाई देता है जो वस्तुतः किरणों का ही प्रकाश होता है, तथा सीप में चाँदी का भ्रम होता है, इसी प्रकार राम में इस जगत् का भ्रम होता है। जब राम के सत्य स्वरूप का ज्ञान हो जाता है तब यह भ्रम दूर हो जाता है। वे राम वे ही ब्रह्म हैं जिन का आदि और अन्त नहीं मिलता। सारे विश्व को अपने इशारे पर नचाने वाली बाया भी उनके इशारे पर नाचा करती है —

जो माया सब जगहिं नचावा। जासु चरित लखि काहु न पावा॥
सोइ प्रभु भ्रू बिलास खगराजा। नाच नटी इव सहित समाजा॥

यह सारा ब्रह्माण्ड उनके शरीर के अन्दर भी है और बाहर भी। अनेक शिव, विष्णु और

Scanned with CamScanner